ये बुजुर्ग

इस्मत चुगताई

या खुदा अगर इन बुजुर्गों को
तू जड़ से पैदा ही न करता, तो तेरी खुदाई में
कौन-सी कमी आ जाती!

"अमाँ, चलो भी!" सुरेश ने आँख मारी।

"नहीं, यार अम्मा बहुत डाँटेंगी।" रशीद ने मुँह बनाया।

"कह देना, ट्यूटोरियल में देर हो गई।"

"वो इन चकमों में आने वाली नहीं हैं। सिद्दीकी साहब से रोज़ाना एक-एक बात पूछती हैं। पता चल गया कि झूठ बोला गया है, तो चमड़ी उधेड़ देंगी।"

"धत् तेरे की! इतने बड़े हो गए और अब तक अम्मा मारती हैं!" सुरेश ने कहकहा लगाया।

"मारती तो नहीं, मगर मारने से बदतर हालत कर देती हैं; रोने लगती हैं। फिर अब्बा लेक्चर झाड़ने लगते हैं।" रशीद ने ठण्डी साँस भरी।

यह सुनकर सुरेश का भी दिल बुझ गया। "ये अल्लाह ने जान को माँ-बाप क्यों लगा दिए हैं? हर वक्त इधर से उधर हाँकते हैं। नहाए क्यों नहीं? जूते-मोज़े सम्भाल के रखो। मुन्नी को न चिढ़ाओ। वहीद को चपत न लगाओ। ऊपर से आपा खदेड़ती रहती हैं। अम्मा तो एक दफा को टाल भी जाएँ, आपा तो जान को आ जाती हैं।"

ज़िन्दगी कितने दुखों में जकड़ी हुई है! साँस लेने की इजाज़त नहीं। पिछले हफ्ते जब सुरेश के डैडी ने उसे थप्पड़ लगाए थे, तो उस वक्त रशीद को बड़ा ही गुस्सा आया था। दोनों ने प्लान बना लिया था कि यह कैद ज़्यादा दिन तक नहीं झेली जा सकती। दोनों ने बम्बई भाग चलने का प्रोग्राम बनाया – वहाँ जाके मज़े से हीरो बनेंगे और ठाठ करेंगे। इन मनहूस किताबों से तो पीछा छूटेगा। हर साल कमबख्त पहले से ज़्यादा मोटी और मुश्किल होती जा रही हैं।

मगर सवाल यह था कि पैसे कहाँ से आएँ? इतने पैसे तो चुराने की भी हिम्मत न थी। आजकल माँओं के बटुवे और बापों की जेबें अक्सर खाली ही मिलती हैं। महीने पर तनखा आई नहीं कि दम भर में चुटपुट।

आपा से बढ़कर दादी अम्मा थीं। न ठीक से दिखाई दे, न सुनाई दे, मगर हर बात में टाँग अड़ाएँगी। वह तो अम्मा और अब्बा की भी रीढ़ मारती रहती हैं। खेलोगे तो कहेंगी, "हर वक्त धमा-चौकड़ी! क्या मज़ाल जो एक हरूफ भी पढ़ जाएँ!" और अगर पढ़ रहे हों तो

टोकेंगी, "ऐ बस कर निगोड़े! कब तक पढ़ेगा? आँखें बट्टन हो जाएँगी।"

कभी कहेंगी, "बस हर वक्त गायब, यह नहीं कभी पास आके बैठे!"

और जो पास बैठो तो, "ऐ लड़के, क्यों मेरी जान पर सवार है! चल गारत हो!"

या खुदा अगर इन बुजुर्गों को तू जड़ से पैदा ही न करता तो तेरी खुदाई में कौन-सी कमी आ जाती!

मगर जब उस दिन रशीद ने घर में कदम रखा, तो कुछ अजीब-सा लगा। हर तरफ सन्नाटा-सा छाया हुआ था। सब चुप-चुप से, कुछ सहमे-से बैठे थे। सिर्फ दादी अम्मा बड़बड़ा रही थीं, "लो भला, यह भी कोई तरीका है..."

रशीद ने मुन्नी का रिबन खींचा। वह मुर्गी की तरह चिल्लाई, "कें...!" जानबूझकर हमीद के कनकौवे पर पैर रखता हुआ वह ड्राइंग रूम में चला गया। हमीद मिनमिनाने लगा। मगर न अम्मा ने डाँटा, न आपा गुर्राई। रशीद उन्हें कनखियों से देखते हुए गुज़र गया। जूते उतारकर उसने चप्पल में पैर डाले। फिर चौंककर आपा की तरफ देखा जो दरवाज़े पर सहमी हुई खड़ी थीं।

"क्या है?"

"अब्बा बुला रहे हैं।"

"क्यों?" रशीद चिढ़ गया। उसकी रिपोर्ट तो काफी अच्छी आई थी, फिर...

"पता नहीं, बकवास न करो, चलो।"

"चलते हैं!" रशीद ने भौंककर कहा।

"ज़बान सम्भाल के बात करना, वरना लगाऊँगी एक थप्पड़!"

"अजी, मर गए थप्पड़ लगाने वाले, खुदा की कसम..."

"मरियम ....शैदा...!" नीचे से अम्मा ने पुकारा।

"मरो... न चलो..." तनतन करती आपा चल दीं।

"क्या मुसीबत है!" रशीद ने तंग आकर कहा।

अब्बा आराम-कुर्सी पर अधलेटे ज़बरदस्ती मुस्कराने की कोशिश कर रहे थे। रशीद और मरियम को देखकर त्यौरियाँ चढ़ाकर कोई सख्त बात कहने की बजाय बड़ी नर्मी से बोले, "आओ... आओ, ओ!" जैसे वे दोनों कोई माननीय मेहमान हों। थोड़ी देर तक बेतुकी खामोशी छाई रही। फिर अब्बा खाँसे भेद-भरी नज़रों से अम्मा की तरफ देखा, फिर मुस्कराए, फिर खाँसे।

"बेगम, तुम ही बताओ।"

"नहीं आप...."

थोड़ी देर दोनों तकल्लुफ करते रहे। फिर अब्बा खकारे। अम्मा ने मुँह फेर लिया। उनकी आँखों में आँसू थे जिन्हें वे छिपा रही थीं।

सभी चित्रः जोएल गिल

"तुम्हारी साल-गिरह सात फरवरी को है ना, मरियम?"

"जी...!" मरियम उछल पड़ी।

"तुम तेरह बरस पूरे करके चौदहवें साल में कदम रखोगी?"

"जी?" मरियम का मुँह फक हो गया। क्या अब्बा उसकी शादी तय कर रहे हैं? रशीद के पेट में चूहे कूदने लगे।

"और तुम रशीद मियाँ, तुम अक्तूबर में बारह साल के होकर अब... अरे नहीं, ग्यारह के होकर अब बारहवें में चल रहे हो।"

अब्बा हँसे, "जी!" रशीद की हथेलियाँ पसीज गईं। थोड़ी देर खामोशी छाई रही।

"वैसे तो तुम्हारी अम्मा का और खुद हमारा भी ख्याल है कि अभी तुम दोनों बच्चे हो। मगर हमारा यह ख्याल गलत है।

इसलिए हमने फैसला किया कि तुम्हारी राय लेने में कोई हर्ज़ नहीं।"

फिर भयानक खामोशी मण्डराने लगी। अब्बा ने अम्मा की तरफ करुणा भरी निगाहों से देखा।

"डॉक्टरों का कहना है कि..." अम्मा की आवाज़ भर्रा गई।

"तुम तो ऐसे घबरा रही हो, जैसे हम मरने जा रहे हैं!" अब्बा हँसे।

"खुदा न करे!" अम्मा फूट पड़ीं।

"बेटे, हमें पहाड़ पर जाना पड़ेगा।"

"पहाड़ पर?" मरियम ने काँपकर कहा।

"हाँ, कोई ऐसी खतरे की बात नहीं। दाएँ फेफड़े पर छोटा-सा पैच है...समझी?" मरियम ने मुण्डी हिला दी।

"हमारे साथ तुम्हारी अम्मा को भी जाना होगा। वैसे हमने तो इनसे कहा भी कि इनके जाने की ज़रूरत नहीं, मगर..."

"मैं ज़रूर जाऊँगी!" अम्मा बोलीं।

"यहाँ बच्चों की देखभाल... क्यों भई, तुम लोगों की क्या राय है? बेकार है ना इनका जाना?"

मरियम ने रशीद की तरफ देखा। रशीद को गुस्सा आने लगा। आज तक उसके अपने मामले में भी कभी किसी ने ज़रा राय नहीं ली, हमेशा हुकम ही दिए गए और आज उससे ऐसे राय तलब की जा रही थी, जैसे वह भी कोई बुज़ुर्ग हो।

"तुम्हारी फूफी जान को लिखा मगर वो..."

"आप क्यों जा रहे हैं?"...रशीद ने बच्चों की तरह मचलकर कहा। फिर एक दम शर्म से पानी हो गया, "मेरा मतलब है कि...आप..."

"हम समझते हैं, तुम्हारा क्या मतलब है। काश, हमें न जाना पड़ता!" अब्बा ने नर्मी से कहा।

"जी ..." रशीद के गले में आँसू घुमने लगे।

"सवाल मुन्नी और हमीद का है। ये बहुत छोटे हैं। कुछ नहीं समझते। अब तुम्हारे सिवा और कौन उनकी देखभाल कर सकता है?"

"आप बिलकुल फिक्र न करें, अब्बा जान।" मरियम ने बड़े विश्वास से कहा।

"रशीद..."

"जी...?"

"तुम और मरियम बात-बात पर लड़ते हो।"

"ये आपा..."

"हाँ-हाँ, आपा बहुत खोटी हैं। सब आपाएँ – सब बड़ी बहनें बुरी होती हैं! हम भी अपनी आपा से बहुत लड़ा करते थे। मगर हमें तुम पर भरोसा है... ओहो, यह मरियम तो बड़ी भावुक लड़की है...!" मरियम को रोते देखकर अब्बा मुस्कराए। फिर रशीद से बोले, "बेटे, तुम काफी मज़बूत दिल वाले हो। रुपया-पैसा तुम चाहो अपने हाथ में रखो, चाहे..."

"रुपया आपा ही रखेंगी!" रशीद को बड़ी घबराहट होने लगी। "एक बात और है। दौलत खाँ तो रहेंगे। बाकी बावर्ची, बेयरा और आया – इनमें से अम्मा के लिए आया का होना ज़रूरी है, बावर्ची के बगैर तुम्हारा काम नहीं चलेगा। अम्मा होतीं तो और बात थी। मगर बेयरा..."

"हाँ, बेयरे की ज़रूरत नहीं।" मरियम ने राय दी। "खाना भी मैं पका लूँगी, बावर्ची भी बेकार है।"

"तुम स्कूल जाओगी या खाना पकाओगी?"

"रहमत बुआ खाना पका लेंगी। मैं भी मदद करूँगी।" मरियम ने कहा।

"यही हमने भी सोचा था। हमारे पास बैंक में बहुत कम रुपए हैं। तीन महीने पूरी तनखा, फिर आधी तनखा मिलेगी। इसमें कैसे गुज़ारा होगा – यह फिक्र हमें खाए जा रही है। सोचते हैं, न जाएँ।"

"नहीं, आपका जाना ज़रूरी है। आप हमारी बिलकुल फिक्र न करें।"

"मुन्नी और हमीद..." अम्मा सहमी हुई बोलीं।

"उन्हें भी समझाना होगा।"

अम्मा चलने से पहले कैसी बौखलाई हुई थीं! मुन्नी और हमीद पहले तो खूब मचलने लगे, मगर जब अब्बा ने समझाया, तो उन्होंने अपने आँसू पोंछ लिए।

अब्बा ने कहा, "बच्चो, तुम्हें यह बच्चा-पन भूलना पड़ेगा। तुम लोग वहाँ नहीं जा सकते, क्योंकि वहाँ बच्चों को रखने की इजाज़त नहीं। दूसरे, यह छूत की बीमारी है। तुम लोगों के फेफड़े बहुत नाज़ुक हैं – और अगर हम न गए तो मर जाएँगे।"

"खुदा न करे...!" मरियम का मन भर आया।

"नहीं, अब्बा, आप न मरिए, प्लीज़!"

मुन्नी रो पड़ी।

अब्बा के जाने से पहले मरियम और रशीद ने दोनों बच्चों को बुलाकर कमरा बन्द करके एक मीटिंग की।

"देखो जी, अगर अब्बा के चलते वक्त तुम लोग रोए-पीटे, तो मुझसे बुरा कोई न होगा, खाल उधेड़ दूँगा...!" रशीद गुर्राया। दोनों बिसुरने लगे।

"हाय, रश्शो, अम्मा के लफ्ज़ भूल गए! उनके जाने के बाद हम और तुम ही इनके माँ-बाप हैं!" मरियम ने दोनों को अपने पास खींच लिया, "मुन्नी... हमीद, अब्बा और अम्मा जा रहे हैं। हम सब दुआ करेंगे कि वे जल्दी से अच्छे होकर आ जाएँ। तुम रोए तो उन्हें दुख होगा। फिर उनकी बीमारी और बढ़ेगी।"

"हम बिलकुल नहीं रोएँगे।" हमीद ने रोकर कहा। "मैं भी नहीं।" मुन्नी फूट पड़ी।

स्टेशन पर चारों बच्चों ने अब्बा-अम्मा को हँसकर विदा किया। मगर जब गाड़ी दूर चली गई, तो चारों सिसकियाँ भरते घर वापस आए।

घर फाड़ खाने को दौड़ा। मुन्नी और हमीद तो ऐसे सहम गए, जैसे अनाथ हो गए हों। रशीद अब्बा की कुर्सी पर बैठकर एकदम अब्बा की तरह गम्भीर और समझदार हो गया। जानवरों की तरह खाने पर टूट पड़ने की बजाय वह हमीद और मुन्नी की ज़्यादा खातिर करने लगा। छोटे बहन-भाई को सुलाकर रशीद और मरियम बड़े-बूढ़ों की तरह हिसाब-किताब करने लगे।

सुबह ही सुबह जब मरियम दोनों बच्चों को तैयार करने गई, तो उसने देखा कि रशीद मुन्नी के बालों में बड़ी मेहनत से रिबन बाँध रहा है और हमीद खुद अपने बालों में कँघी कर रहा है। नाश्ते पर दोनों ने कहे बगैर नैपकिन लगाए और सलीके से खाने लगे।

बावर्ची और बेयरे के जाने से, पहले तो तक्लीफ हुई, फिर मरियम और रशीद ने सिर जोड़कर हिसाब लगाया – काम का बँटवारा होगा। मुन्नी और हमीद कपड़े और किताबें नहीं फैलाएँगे। अपने कपड़े सलीके से रखेंगे। पढ़ाई में ज़रा भी कमी न आए। रिपोर्ट खराब हुई तो अब्बा को तकलीफ होगी और वे जल्द अच्छे न हो पाएँगे। दादी अम्मा सबसे छोटा बच्चा थीं। उन्हें बीमारी के बारे में नहीं बताया था, वरना रो-रोकर मर जातीं। कह दिया था कि इम्तिहानों के सिलसिले में नागपुर गए हैं।

"हे हे! बच्चों को छोड़ के मियाँ-बीवी क्या मज़े से चल दिए! और आने का नाम नहीं लेते! वो हर वक्त बड़बड़ातीं।"

आखिर के दो महीने बड़े कठिन गुज़रे। एक-एक पैसा सम्भालकर खर्च करना पड़ा। दौलत खाँ सठियाए हुए थे। मरियम और रशीद साइकिलों पर सामान लादकर लाते और सफाई से डिब्बों में भरते। मरियम ने अब्बा को दो स्वेटर बुनकर भेजे। शनिवार की शाम को सब बैठकर खत लिखते। खाने की मेज़ रशीद लगाता। मरियम पकाने में आया का हाथ बँटाती। हमीद और मुन्नी ड्राइंग रूम साफ करते। दादी को फुसलाने के लिए उनसे पुरानी सड़ी कहानियाँ बैठकर सुनते। वही, एक बादशाह था...

"दुनिया के बादशाह खत्म हो रहे हैं। दादी अम्मा का बादशाह नहीं मरता!" रशीद चिढ़कर कहता। मगर दादी अम्मा का दिल न छोटा हो, इसलिए जो वो सुनातीं, सब्र से सुन लेता।

अम्मा-अब्बा वापस आ रहे थे। मारे खुशी के चारों को नींद नहीं आई। बार-बार घड़ी देखते रहे। सुबह ही सुबह ढेर से हार और फूल लेकर स्टेशन पहुँचे। अब्बा को देखकर आँखें फटी की फटी रह गईं – लाल चेहरा, चमकती हुई आँखें! क्या लम्बे-लम्बे डग भरते हुए दौड़े और चारों को बाजुओं में समेट लिया।

अब्बा-अम्मा को देखकर जैसे मनों बोझ रशीद के सिर से उतर गया। उसने वहीं मुन्नी की चोटियाँ खींचीं और हमीद की नाक मरोड़ी।

मरियम उसका खोया हुआ बचपन वापस आते देखकर मुस्करा उठी। कभी-कभी तो वह रशीद को इतना गम्भीर देखकर डर जाती थी।

अम्मा की भी सेहत बन गई थी। दोनों के आते ही ऊधमबाज़ी शुरू हो गई। बच्चे ज़िद्द करने लगे। बहन-भाई लड़ने-झगड़ने लगे। अम्मा उन्हें डाँटने-फटकारने लगीं।

उसी दिन शाम को सुरेश ने कहा, "चलो, यार, बड़ी ज़ोरदार पिक्चर लगी है।"

"नहीं भई, कल टेस्ट है, अम्मा डाँटेगी।" रशीद ने रोनी सूरत बनाकर कहा और सोचा – या खुदा, तूने ये बुज़ुर्ग पैदा ही क्यों किए!